THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_182249
UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81·6/S61C Accession No. G.H. 2276

Author सिंह, शम्भुनाथ।

Title छायालोक। 1945.

This book should be returned on or before the date last marked below.

छायालोक

शम्भूनाथसिंह

प्रकाशक
युग मन्दिर : : उन्नाव

मूल्य २)

मुद्रक
पं० भृगुराज भार्गव
भार्गव-प्रिंटिंग-वर्क्स, लखनऊ

निवेदन

'रूपरश्मि' के बाद 'छायालोक'। जीवन के प्रथम प्रभात में जीवन और जगत के सौन्दर्य की जो रंगीनी 'रूपरश्मि' में चित्रित हुई, यौवन की चढ़ती बेला में सत्य की प्रखर किरणों ने उसे मिटा दिया। जीवन के पथ पर बढ़ते हुए कवि-सहज सुकोमल मन ने क्लान्त-श्रान्त होकर विश्राम चाहा। उसे जीवन के सपनों की शीतल छाया अनायास ही मिल गयी। मन को उस छाया में विश्रान्ति मिली, आगे की यात्रा के लिए आवश्यक शक्ति मिली। 'छायालोक' में उन्हीं श्रम और विश्राम के क्षणों की विविध अनुभूतियाँ अभिव्यक्त हुई हैं। ये कवितायें जीवन के मीठे-कड़ुवे सत्यों की स्वप्निल छायायें हैं। इनमें बहुरूपता होते हुए भी एक क्रमबद्धता है। इनकी भावधारा अन्धकार की ओर से प्रकाश की ओर प्रवाहित हुई है जिसे छाया-देश की, अभाव, निराशा, आभास, पहिचान, उपालम्भ, आशा, प्राप्ति, संयोग, आनन्द, बिछुड़न, वेदना, प्रकाश आदि विभिन्न भूमियों की यात्रा करनी पड़ी है। इन भूमियों में मन पलायन के लिए नहीं, शक्ति-संचय के लिए रमा है। अपनी अगली यात्रा में जीवन और जगत के संघर्ष, स्फूर्ति, साहस, सक्रियता, प्रगति, आशा, आनन्द आदि की स्वस्थ भूमियों के गीत गा सकूँगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

काशी
१५ अगस्त १९४५

शम्भूनाथसिंह

कल्पना की उस लजीली लता को
जिसके
सुरभि-तरंगित फूल
मेरे प्राणों के स्वर बन गये हैं

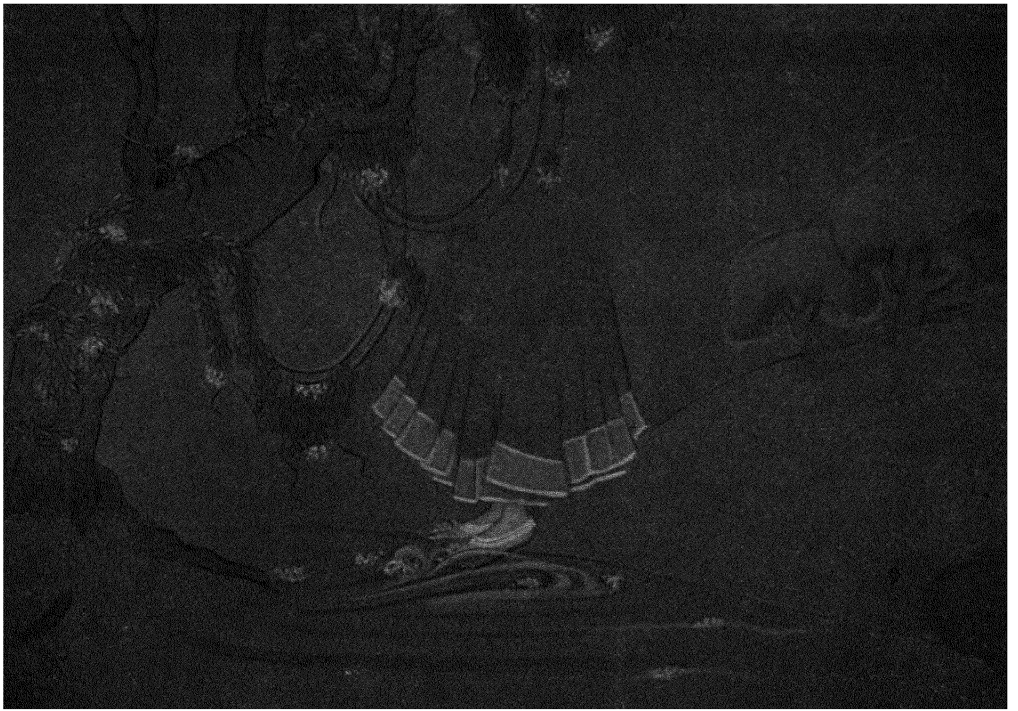

किसी के चरण पर वरण फूल कितने,
लता ने चढ़ाये, लहर ने बहाये !

चित्रकार—श्री जगदीशप्रसाद गुप्त 'विश्व'

१

समय की शिला पर मधुर चित्र कितने
किसी ने बनाये, किसी ने मिटाये !

किसी ने लिखी आँसुओं से कहानी
किसी ने पढ़ा किन्तु दो बूँद पानी
इसी में गये बीत दिन ज़िन्दगी के
गई घुल जवानी, गई मिट निशानी !

विकल सिन्धु से साध के मेघ कितने
धरा ने उठाये, गगन ने गिराये

शलभ ने शिखा को सदा ध्येय माना
किसी को लगा यह मरण का बहाना
शलभ जल न पाया शलभ मिट न पाया
तिमिर में उसे पर मिला क्या ठिकाना

प्रणय-पन्थ पर प्राण के दीप कितने
मिलन ने जलाये, विरह ने बुझाये !

जलधि ने गगन-चित्र खींचा नयन में
उतरती हुई उर्वशी देख घन में
अचल किन्तु चलचित्र थे हो न पाये
कि सहसा बुझी रूप की ज्योति क्षण में

जलद-पत्र पर इन्द्रधनु रंग कितने
किरण ने सजाये, पवन ने उड़ाये !

भटकती हुई राह में वंचना की
रुकी श्रान्त हो जब लहर चेतना की
तिमिर-आवरण ज्योति का वर बना जब
कि टूटी तभी शृंखला साधना की

नयन-प्राण में रूप के स्वप्न कितने
निशा ने जगाये, उषा ने सुलाये !

सुरभि की अनिल पंख पर मौन भाषा
उड़ी, वन्दना की जगी सुप्त आशा
तुहिन-बिन्दु बन कर बिखर पर गये स्वर
नहीं बुझ सकी अर्चना की पिपासा

किसी के चरण पर वरण फूल कितने
लता ने चढ़ाये, लहर ने बहाये !

२

उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

पथ में बिछे प्राण
मुखरित प्रणय-गान
जलते युगों से
नयन-दीप अम्लान !

पर शून्य में ही बिखरता रहा प्यार !
उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

दिन थे प्रणय-हास
निशि प्यार के पाश,
उड़ती रही ले
प्रणय-गंध हर साँस !

पर सत्य कब हो सका स्वप्न-अभिसार ?
उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

ज्योतित किया द्वार
जीवन-शिखा वार,
जलता रहा आरती-
दीप में प्यार !

पर बाँध पाये किसे ये किरण तार !
उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

पथ का मिटा ज्ञान
क्या काल का मान !
अब तो हुआ क्षीण
अस्तित्व का भान

आराधना का मिला पर न आधार !
उर के खुले के खुले ही रहे द्वार !

३

मुक्ति-कारा की अचल प्राचीर !
मैंने क्या किया था ?

अर्चना मैंने सदा की
साधना मैंने सदा की
प्राण के मृदु बन्धनों की
कामना मैंने सदा की

पर मिली यह शून्य की ज़ंजीर !
मैंने क्या किया था ?

विश्व में मैंने दिये भर
वन्दना के गीत के स्वर
रिक्तता भरने चला निज
बन्धनों की प्यास लेकर

मुक्ति पर मुझको मिली बेपीर !
मैंने क्या किया था ?

शून्य में निर्बन्ध जीवन
उड़ रहा बन तूल साधन
गति अनियमित, पथ अनिश्चित
भ्रान्ति ही अब साधना धन

उर्मियाँ मन की न पातीं तीर !
मैंने क्या किया था ?

मुक्ति-कारा की अचल प्राचीर !
मैंने क्या किया था ?

४

मेरी अमिट भूख मेरी अमर प्यास !

मन की कथा मौन
तन की व्यथा मौन
क्रन्दन विकल प्राण—
के ये सुने कौन ?

हँसते रुदन का करे कौन विश्वास !
मेरी अमिट भूख, मेरी अमर प्यास !

दुख-सिन्धु का कूल
मैं ही गया भूल
मेरी तरी झेलती
अश्रु के फूल

फिर कौन मेरा लिखे हास-इतिहास !
मेरी अमिट भूख, मेरी अमर प्यास !

ये अश्रु के गान,
ये मौन आह्वान,
ये सत्य के स्वप्न,
ये शाप - वरदान—

इनसे बँधे कौन ये हैं कठिन पाश !
मेरी अमिट भूख, मेरी अमर प्यास !

आगे कठिन राह
आगे प्रबल दाह
जीवन रुकेगा न
हों अश्रु या आह !

चाहे मिटूँ मैं मिटेगी न पर प्यास !
मेरी अमिट भूख, मेरी अमर प्यास !

५

जिस पर मुसकाती रूप-किरण
मुझसे वह दूर किनारा है।

जीवन का मुग्ध शलभ मैं था
तम की झंझा में उड़ आया
प्राणों की बलि देकर, न
किसी के प्राणों को बहला पाया

तम का यह मौन गहन कानन
जिसमें सम जीवन और मरण
बुझती जाती मन की ज्वाला
भी छू तम की शीतल छाया

अब तो नयनों में क्षण भर भी
झलका करती मधु प्यास नहीं
जिस पर लहराता है जीवन
मुझसे वह दूर किनारा है।

सपनों की दीपशिखा मेरी
जल बुझ जाने किस ओर गयी,
अरमानों की दुनिया मेरी
जाने तम के किस छोर गयी,

जिसकी ज्वाला को छू क्षण भर
हो जाते मेरे प्राण अमर
आँखों से छूटी दूर कहीं
उस अरुण किरण की डोर गयी

अब तो प्राणों के सपनों का
भी शेष रहा विश्वास नहीं
है मुक्ति जहाँ बनता बन्धन
मुझसे वह दूर किनारा है!

अनजान दिशा का मैं राही
अब भी पाँखें फैला लेता
अब भी तम - सागर में जाने
क्यों अपनी प्राण - तरी खेता

अब भी आवर्त्तों के बाहर
लगती धुँधली दुनिया सुन्दर
अब भी आकर्षण के क्षण में
रोता रोता मुसका देता

लेकिन इन बन्दी प्राणों में
स्पन्दन भरता आकाश नहीं
वरदान जहाँ का मौन मरण
मुझसे वह दूर किनारा है!

६

मुझे ज़िन्दगी का सहारा न मिलता !
बहा जा रहा हूँ किनारा न मिलता !

गगन - सिन्धु में रस
समाता नहीं है,
धरा में सुधा की
लहर बह रही है,

बुझे पर जलन प्राण की आज जिससे
मुझे अश्रु दो बूँद खारा न मिलता !

गगन रूप के दीप
कितने, जलाता,
तिमिर - पन्थ पर—
चाँदनी भी बिछाता,

जले किन्तु जो प्राण-पथ पर अचंचल
नयन का मुझे ज्योति-तारा न मिलता !

सकल सृष्टि बलिदान
की है कहानी,
मिटेगी विवश—
ज़िन्दगी की निशानी,

मिटें किन्तु निर्द्वन्द्व हो प्राण जिस पर
किसी के नयन का इशारा न मिलता !
मुझे ज़िन्दगी का सहारा न मिलता।
बहा जा रहा हूँ किनारा न मिलता !

७

भार हलका हो न पाता !

कह रहीं मुझसे यहाँ
वन - घाटियाँ सौ सौ कथायें
जागती ही जा रही हैं
किन्तु इस मन की व्यथायें

स्वप्न के संसार में भी
यह दुखी मन सो न पाता !
भार हलका हो न पाता !

रूप की किरणें हृदय का
द्वार मधु से सींच जातीं
स्निग्ध स्वर धारा हृदय तक
एक रेखा खींच जाती

किन्तु छवि के हास में यह
मन स्वयं को खो न पाता !
भार हलका हो न पाता !

निकटता ही बन रही दूरी
बुझे फिर क्यों पिपासा
बन्धनों में बँध गयी है
आज सीमा हीन आशा

मुस्करा कर रो रहा मैं
आज खुल कर रो न पाता !
भार हलका हो न पाता !

८

मेरे मन, ओ एकाकी मन
तुम क्या जानो जीवन !

जिसमें शरमाते शरमाते
बँध जाते हैं लोचन
कह देता युग युग की साधें
क्षण भर का मौन मिलन
जिसमें साँसों का स्वर बनता
दो प्राणों का गायन

मेरे मन ओ भोले मन तुम
क्या जानो वह बन्धन !

जिसमें सपनों से छा जाते
सुधि के सतरंगे घन !
भींगा भींगा रहता निशि दिन
मधु से मन का आँगन
प्राणों का भार बना करती
है क्षण भर की बिछुड़न

मेरे मन ओ प्यासे मन तुम
क्या जानो वह सावन !

जिसमें प्राणों के नयन देखते
प्राणों का मन्थन
इस विश्व चक्र का रुक जाता
क्षण भर को आवर्तन
शाश्वत बन जाता उर-मन का
क्षण भर का आलिंगन !

मेरे मन ओ वंचित मन तुम
क्या जानो वह स्पन्दन !

जिसमें अपना दुख बन जाता
जग के सुख का साधन
जग के कण कण पर होता है
उर स्नेह सुधा सिंचन
जिसके प्रकाश में सम लगते
सुख दुख औ जड़ चेतन

मेरे मन ओ दुखिया मन तुम
क्या जानो वह दर्शन !
मेरे मन ओ एकाकी मन !
तुम क्या जानो जीवन !

६

पुकारा मैंने कितनी बार !
किसी को मैंने कितनी बार !

चाँदनी ने मुझको कल रात
फूल के मारे सौ सौ तीर !
जलाती सपनों का संसार
उठी ज्वाला सी मन में पीर !

लपट से घिर कर नभ के द्वार
पुकारा मैंने कितनी बार !
किसी को मैंने कितनी बार !

धुआँ बन कर प्राणों का दाह
साँस में उड़ी गन्ध-मधु हीन,
रात भर जलते थे चुपचाप
नयन ये नीराजन में लीन

प्राण में लेकर हाहाकार
पुकारा मैंने कितनी बार!
किसी को मैंने कितनी बार!
श्याम घनखण्डों पर सुकुमार

उषा का फैला जब वरदान,
सृष्टि के कण कण की कर याद
बहा जब गल कोई पाषाण

। जाने ले कैसा अधिकार
[कारा मैंने कितनी बार
कसी को मैंने कितनी बार!

१०

युगों से दीप प्राणों का
किसी की याद में जलता !

समय के शून्य में देते
शिखा के धूम्र घन फेरी
प्रणय की इन्द्रधनु बनती
न पर आराधना मेरी

युगों से प्यास का ज्वाला-
मुखी बन प्यार है पलता !

विरह की साँझ झंझा की
कथा ले राह में आयी
कठिन झकझोर से भी पर
नहीं यह ज्योति बुझ पायी

युगों से स्नेह पथ पर
स्वप्न का यह कारवाँ चलता!

न आशा ध्येय की तो क्या
मुझे अब ध्यान ही भाता
निशा का स्वप्न क्षण मेरा
चिरन्तन प्रात बन जाता

नहीं अब सत्य-मरु का मेघ
मन की साध को छलता!
युगों से दीप प्राणों का
किसी की याद में जलता!

११

बरस लो प्राण-घन मेरे !

बजा कर वेणु प्राणों का
स्वरों से प्यार बरसाया
किसी के प्राण-रन्ध्रों में
न पर जब गान लहराता

नयन के शून्य में तिर-तिर
बरस लो प्राण-घन मेरे।

न समझा था कि मन का
इन्द्रधनु बन जायगा सपना
मरण सा मौन हूँ अब मैं
न कोई है यहाँ अपना

डुबा सब चेतना फिर-फिर
बरस लो प्राण-घन मेरे !

गगन की साँस-मरु की
प्यास सा अब गया जीवन
गये जब टूट मन के भ्रम
गये जब टूट सब बन्धन

व्यथा की घाटियों में घिर
बरस लो प्राण-घन मेरे !

१२

सपने भी मुझको भूल गये !

निष्ठुर कितना कर्मों का मग
कितना छलता जीवन जगमग
करुणा के चरणों पर क्षणभर
झुक पा न रहा प्राणों का जग

अब डूब नयन के सागर में
मन की डाली के फूल गये ।

होता नव किरनों का गायन
मधु-रास मचाता नील गगन
उन्मुक्त न उड़ पाते पर अब
क्षण भर मेरे प्यासे लोचन

मादक मधु धारा के पागल
ये सूख अधर के फूल गये ।

फैला विस्तार लिये जीवन।
लहरों का जिसमें आवर्तन
जिनसे बँधकर बहना सुखमय,
मुझको वे छोड़ गये बन्धन!

मेरी रस की प्यासी धरती
पर ये घन बरसा धूल गये।

१३

बीतेगा क्या यों ही जीवन ?

जाने किस दुनिया में चलता
जाने किस ज्वाला में जलता
नयनों के उमड़े सागर से
अपने प्यासे मन को छलता

मुझमें ही लय होने को हैं
घिर घिर आते मेरे ये घन !
बीतेगा क्या यों ही जीवन ?

बेसुध हो जाता मैं सुन सुन
जाने किस पायल की रुनझुन
रख देता हूँ पथ पर, अपने—
प्राणों के ये शतदल चुन चुन

साँसों के इन दीपों से पर
होता मेरा ही नीराजन!
बीतेगा क्या यों ही जीवन!

लगता, यह सब सपना मृगजल,
लगता, जीवन सूना, असफल,
लगता, जीवन जायेगा लघु—
हिमकण सा गल जलकण सा ढल

फिर भी रँग रँग जाता मन को
जाने किन सपनों का सावन!
बीतेगा क्या यों ही जीवन!

१५

मेरे पंख ये झर जायँ !

बन्दी मैं गगन के द्वार
कर पाता न मुक्त विहार,
जीवन बन गया जब भार

जीवन में न जो पूरे हुए
अरमान, वे मर जायँ !
मेरे पंख ये झर जायँ !

भूखी सी युगों की रात–
करुणा की विकल बरसात–
पतझर की चिता की बात–

जीवन में हुए जो छिद्र,
उनको मत स्वरित कर जायँ !
मेरे पख ये झर जायँ !

जिसमें हो अमा की कान्ति
जिसमें हो मरण की भ्रान्ति
ऐसी चाहिये चिर शान्ति

जीवन के गिने क्षण, मत
किसी की याद से भर जायँ!
मेरे पंख ये झर जायँ!

१५

तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या !

किसी की आँख के सपने अगर टूटे
किसी के प्राण से अपने अगर छूटे
किसी के प्यार के मधुघट अगर फूटे

तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या ?
दुखी मन व्यर्थ तुम आँसू बहाते क्यों
तुम्हें ही है मिला सुख का सहारा क्या ?
तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या ?

मिले यदि प्राण बँधकर स्नेह बन्धन में
बही यदि हास की धारा नयन मन में
खिली नव दामिनी यदि प्यास के घन में

तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या ?
दुखी मन तुम अधर पर हास लाते क्यों

तुम्हें भी है मिला मधुमय किनारा क्या ?
तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या ?

जला यदि प्यार की ज्वाला जली दुनिया
तपा यदि स्वर्ण की काया गली दुनिया
मधुर मधुधार में यदि बह चली दुनिया

तुम्हारा क्या, तुन्हारा क्या, तुम्हारा क्या ?
दुखी मन, प्यार पथ पर पग बढ़ाते क्यों ?
किसी ने भूल कर तुमको पुकारा क्या ?
तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या ?

१६

पागल मन मत मनुहार करो !

भ्रम हो सकता वरदान नहीं
सच होते स्वप्न - विधान नहीं
बुलबुले, भँवर में जीवन के
बन सकते हैं जलयान नहीं

मेरे मन जल माया से हट
अपने पर तो अधिकार करो !

चंचल चंचल जिसकी काया
भोले ! वह तो मरु की माया
जीवन से दूर बनी रहती
चंचल मधु सपनों की छाया

भूलो, नभ के कुसुमों को ओ
भू के प्राणी, मत प्यार करो !

रजनी दे देती जो जलकण
भर लो उनसे अपने लोचन
मत निर्मोही घन से माँगो
प्यासे सागर, मधुमय जीवन !

रोने वाले, जो कुछ मिलता
हँसते हँसते स्वीकार करो !
पागल मन मत मनुहार करो !

१७

नहीं कोई, नहीं कोई !

सतत अपनी पुकारों पर
सतत अपनी गुहारों पर
सुनाई पड़ रहा केवल
मुझे समवेदना का स्वर

यहाँ आकर मुझे मझधार से
तट पर लगा दे जो—
नहीं कोई, नहीं कोई।

नयन में देखकर पानी
समझता विश्व अज्ञानी
सुनाई पड़ रही केवल
मुझे उपदेश की वाणी

नयन को पोंछ कर
मन की व्यथा मेरी मिटा दे जो
नहीं कोई, नहीं कोई !

व्यथा की देख बरसातें
हृदय के स्वप्न की रातें
सुनाई जा रहीं केवल
मुझे व्यवहार की बातें

समा मन में, नयन में स्वप्न
मेरा सच बना दे जो—
नहीं कोई, नहीं कोई !

मुझे यों देखकर प्यासा
झुलसती देख अभिलाषा
सिखाई जा रही बरबस
मुझे सन्तोष की भाषा

नयन का अश्रु देकर प्यास को
मेरी बुझा दे जो—
नहीं कोई, नहीं कोई !

१८

प्राण, तुम दूर भी
प्राण, तुम पास भी

तुम गगन-दामिनी
पूर्णिमा - चाँदनी
रूप की दीप - लौ
तुम धरा की बनीं !

चिर जलन के तृषित
इस शलभ प्राण की
प्राण, तुम तृप्ति भी
प्राण, तुम प्यास भी !

तुम गगन में पली
तुम सुधा से ढली
तुम धरा-मानसर—
बीच छवि की कली,

चिर विवश हो गये
इस भ्रमर प्राण की
प्राण, तुम मृत्यु भी
प्राण, तुम साँस भी

तुम गगन की परी
तुम उषा सुन्दरी
तुम धरा - रूप - सर
में किरण की तरी

रूप - बन्दी हुए
इस विकल प्राण की
प्राण, तुम मुक्ति भी
प्राण, तुम पाश भी !

दूर तुम ज्यों गगन
पास तुम ज्यों किरण,
दूर ज्यों इन्द्रधनु
पास ज्यों ओसकण,

स्नेह के स्वप्नवाही
मधुर प्राण की
प्राण तुम हो व्यथा

प्राण तुम हास भी !
प्राण तुम दूर भी
प्राण तुम पास भी

१६

किसी के रूप के बादल—

मुझे सोने न देते हैं
मुझे रोने न देते हैं
कभी क्षण एक भी अपना
मुझे होने न देते हैं

रहे घिर प्राण आँगन में
किसी के रूप के बादल !

कभी मैं गा नहीं पाता
कभी मुसका नहीं पाता
किसी को खोल उर अपना
कभी दिखला नहीं पाता

रहे छा आज तन मन में
किसी के रूप के बादल

मुझे चलने न देते ये
मुझे जलने न देते ये,
स्वयं को स्वप्न से भी तो
मुझे छलने न देते ये,

उठे भर आज जीवन में
किसी के रूप के बादल

न तप कर मैं निखर पाता
न मिट कर मैं बिखर पाता
बँधा किन बन्धनों में मैं
न जी पाता न मर पाता

गरजते आज यौवन में
किसी के रूप के बादल !

२०

किसी की आँख के सपने—

मुझे चंचल बनाते हैं
मुझे विह्वल बनाते हैं
दिखा कर रूप की दुनिया
मुझे पागल बनाते हैं

नयन में बस रहे मेरे
किसी की आँख के सपने !

मधुर करते कभी जीवन
गरल करते कभी जीवन
उठा कर रूप के बादल
कभी ये घेरते तन मन

पलक में फँस रहे मेरे
किसी की आँख के सपने !

मुझे क्षण में हँसा देते
मुझे क्षण में रुला देते
चला कर रूप का जादू
बसी दुनिया मिटा देते

अधर में हँस रहे मेरे
किसी की आँख के सपने !

सभी बेसुध बना देते
डुबा सब चेतना देते
जमा कर रूप की ज्वाला
सरस यौवन जला देते

हृदय में धँस रहे मेरे
किसी की आँख के सपने !

२१

मैं तुम्हारी छाँह में चलता रहा, तुमने न जाना ?
सच कभी, तुमने न जाना ?

रूप की किरणें तुम्हारी
ले सदा मैं मुस्कराया
याद के बादल तुम्हारे
ले नयन अपना सजाया

मैं तुम्हारे स्वप्न में पलता रहा तुमने न जाना ?
सच कभी, तुमने न जाना ?

साँस की छाया तुम्हारी
छू सदा जीवन बिताया
प्राण का सौरभ तुम्हारा
छू सजल यौवन बनाया

मैं तुम्हारा स्नेह ले जलता रहा, तुमने न जाना ?
क्या कभी, तुमने न जाना ?

ओ नयनतारा, तुम्हारी
ज्योति से ज्योतित हुआ मैं
हँस उठीं तो हँस उठा मैं
रो पड़ीं तो रो पड़ा मैं

मैं तुम्हारे रूप में ढलता रहा, तुमने न जाना ?
मैं तुम्हारी छाँह में चलता रहा, तुमने न जाना ?
सच कही तुमने न जाना ?

२२

मेरी सुधि क्या आयी न कभी?

सुन्दरता की ओ कुन्दकली!
कोमल किसलय की गोद पली!
पागल भौंरों का दल तुमसे
हँसती उपवन की कुंजगली
अपनेपन से बेसुध पगली,

अपनी आँखों में क्या तुमने
मेरी आँखें पायीं न कभी?
मेरी सुधि क्या आयी न कभी?

जीवन मधु से चंचल चंचल
तन-मन मधु से कोमल कोमल
उर में बन्दी कर जग का मन
अपने में ही विह्वल विह्वल
सरले! क्या खेल रही हो छल?

मेरे सपनों की बदली क्या
तेरे उर में छायी न कभी ?
मेरी सुधि क्या आयी न कभी ?

अनजान पथिक तेरे आँगन
करता हूँ मैं प्रति क्षण गुनगुन
अपने प्राणों की वाणी में
भरता हूँ मैं प्रतिक्षण गुंजन
कुछ आशा ले उन्मन उन्मन

मेरे अश्रुत स्वर में स्वर भर
मन ही मन क्या गायी न कभी ?
मेरी सुधि क्या आयी न कभी ?

आगे जीवन का ताप प्रखर
आगे जीवन का अनमिल स्वर !
तुम ओ अनंग सी संग लगी
अब भी तो कर दो राह मुखर !
सुख से कट जाये आह, डगर

मेरे गीतों की कड़ियाँ क्या
तेरे मन को भायीं न कभी ?
मेरी सुधि क्या आयी न कभी ?

२३

मैं देख रहा तुमको रानी !

मैं देख रहा तुमको विस्तृत
तम की आँखों को फैलाकर–
तुम दूर किसी घर के आँगन
में बैठीं अलकें बिखरा कर–

तुलसी के सम्मुख थाल सजा
पूजा हित घी के दीप जला

निज रूप किरण फैला, करती
सी भावी प्रिय की अगवानी !
मैं देख रहा तुमको रानी !

मैं सोच रहा तुमको रानी !

मैं सोच रहा तुमको, यद्यपि
तुमको मेरी पहचान नहीं

मेरे मन की पाँखें ले क्या
उड़ आओगी तुम प्राण नहीं

कब, किस पथ से तुम आओगी
प्राणों में घुल मिल जाओगी !

मुझसा तुमने भी क्या न कभी
सपने सच करने की ठानी ?
मैं सोच रहा तुमको रानी !

मैं माँग रहा तुमको रानी !

मैं माँग रहा तुमको, तुमसे
सुन लो ओ मेरी अज्ञाते !
मेरे प्राणों के रन्ध्रों में
आ भर जाओ मधु स्वरस्नाते !

पर्वत सी मेरी राह बनी
प्राणों में छायी चाह घनी

सपनों सी आ बरसओ तो
जीवन पर करुणा का पानी।
मैं माँग रहा तुमको रानी !

२४

आ सकोगी ?

आ सकोगी प्राण, क्या इन बन्धनों में आ सकोगी ?

शून्य मन्दिर में गये भर
क्रन्दनों के गान मेरे,
पथ न पाते गहन तम में
प्राण के आह्वान मेरे,

क्या न तुम बन इन घनों की दामिनी मुसका सकोगी ?
आ सकोगी प्राण, क्या इन बन्धनों में आ सकोगी ?

आरती के दीप की जलती
शिखा है प्यास मेरी,
प्यार की लेकर सुरभि नभ
में उड़ी हर साँस मेरी,

प्राण अब इस साधना को क्या न पूर्ण बना सकोगी ?
आ सकोगी प्राण, क्या इन बन्धनों में आ सकोगी ?

कर रहे प्रतिक्षण वरण
जिसमें मरण को प्राण मेरे,
जल गये इस साधना में
साध के वरदान मेरे !

स्नेह का दे दान मुझमें क्या न ज्योति जगा सकोगी ?
आ सकोगी प्राण, क्या इन बन्धनों में आ सकोगी ?

देवि, मेरी साधना की
अब अधिक मत लो परीक्षा,
आज तुम न विफल बनाओ
युग-युगों की यह प्रतीक्षा

ओ निठुर, आया शरण जो क्या उसे ठुकरा सकोगी ?
आ सकोगी प्राण, क्या इन बन्धनों में आ सकोगी ?

२५

पाषाण मत बनो तुम !

जिसने मधुर स्वरों से
छू छू तुम्हें जगाया,
निज प्रणय रागिनी से
बेसुध तुम्हें बनाया,

कलिके, उसी भ्रमर से
अनजान मत बनो तुम !
पाषाण मत बनो तुम !

सोई तिमिर भवन में
जिसकी प्रणय - कहानी,
कुछ राख के कणों में
जिसकी बची निशानी

प्रिय अब उसी शलभ की
पहचान मत बनो तुम!
पाषाण मत बनो तुम!

जिसने मिटा स्वयं को
तुम को अमर बनाया
आराधना सदा की

वरदान पर न पाया
उसकी प्रणय चिता पर
मधुगान मत बनो तुम!
पाषाण मत बनो तुम!

२६

पागल न यों बनाओ

जीवन बँधा हुआ है
यौवन बँधा हुआ है
अभिशाप से किसी के
क्रन्दन बँधा हुआ है

रूपसि बँधे हुये पर
तुम यों न मुस्कराओ !
पागल न यों बनाओ !

दीपक सभी बुझाकर
बीती सभी भुलाकर
मन सो रहा कभी का
आशा सभी मिटाकर

मत सो रहे हृदय को
निज स्वप्न से जगाओ !
पागल न यों बनाओ।

अरमान जल चुके हैं
मधुगान जल चुके हैं
कंकाल जी रहा है
मन-प्राण जल चुके हैं

फिर फिर बुझी चिता में
तुम आग मत लगाओ !
पागल न यों बनाओ !

२७

किसने मुझे पुकारा ?

यह आज किस परी ने
किस कण्ठ बाँसुरी ने
बेसुध मुझे बनाया
किस कुञ्ज की पिकी ने

उर बीच यों बहाकर
मधु की अथाह धारा
किसने मुझे पुकारा ?

यह कौन उर्वशी सी,
किस लोक में बसी सी,
मुझमें जगा रही है
अज्ञात बेबसी सी

टूटी कभी नहीं जो
वह तोड़ मौन कारा—
किसने मुझे पुकारा ?

पहचान मैं न पाया
कुछ जान मैं न पाया
अनजान कौन स्वर यह
मन प्राण में समाया

भर प्राण - रन्ध्र मेरे
स्वर-इन्द्रजाल द्वारा—
किसने मुझे पुकारा ?

२८

आ गयीं तुम प्राण, टूटे
बन्धनों में आ गयीं तुम !

स्नेह का सागर किसी अभि-
शाप से मरु हो गया था,
स्वप्न का बादल घुमड़-घिर
फिर गगन में खो गया था

पर सघन घन का मधुर वर-
दान ले निज लोचनों में
छा गयीं तुम प्राण, मेरे
लोचनों में छा गयीं तुम !

किरण-तारों पर उषा के
जब कि मन ने गान गाया
प्राण के नव कुसुम कुंजों
में तभी पतझार छाया

कंटकों की राह में मधु-
मास ले पर आज पिक सी
गा गयीं तुम प्राण इन
सूने क्षणों में गा गयीं तुम !

थी जलन की उर्म्मियों में
खो गयी करुणा - कहानी
बच रही दो बूँद, बनकर
स्नेह - धारा की निशानी

पर न जाने कौन शीतलता
सुधा - रस - धार वाली

पा गयीं तुम प्राण इन
जलते कणों में पा गयीं तुम ?
आ गयीं तुम प्राण, टूटे
बन्धनों में आ गयीं तुम ?

२६

कहाँ आ गया मैं ?

न मुझको किसी ने कभी था पुकारा
मिला इंगितों का मुझे कब सहारा
न टूटी कभी प्राण की अन्ध कारा

पड़ा सिन्धु में एक कण मैं कभी था
कि सहसा कठिन तोड़कर बन्धनों को
गगन में बना मुक्त घन छा गया मैं

कहाँ आ गया मैं ?

न क्षण भर रुका पन्थ पर अन्ध राही
कि निर्बन्ध होकर चला मैं सदा ही
नहीं ही थका स्नेह संभार - वाही

भटकता रहा दूर जिससे हुआ मैं
क सहसा हटाकर गगन आवरण को
उसी अंक में फिर शरण पा गया मैं

कहाँ आ गया मैं ?

न मेरी किसी को कभी याद आयी
न मैंने कभी दी किसी की दुहाई
हृदय की व्यथा थी हृदय को सुनाई

बिना रन्ध्र की बाँसुरी मैं कभी था
कि सहसा मधुर गीत की गूँज बनकर
धरा व्योम के बीच लहरा गया मैं

कहाँ आ गया मैं ?

३०

प्रिये, प्राण में चाँदनी छा रही है !

व्यथा घुल गयी है
तृषा घुल गयी है
गगन खिल गया है
घटा खुल गयी है,

किसी दूरतम लोक से शून्य पथ पर
अमर ज्योति धारा बही जा रही है !

गयी कल्पना सो
गई चेतना खो
सुधा की सुरभि ही
गयी बेसुधी हो,

कहीं दूर मुझको लहर आज छवि की
किरण की तरी में लिये जा रही है !

बधा मुक्त घन मैं
भरा रिक्त मन मैं,
चिरन्तन विरह से
बना चिर मिलन मैं,

मधुर बन्धनों पर अमिट छाप बन कर
गगन चन्द्रिका आज मुसका रही है!

उड़ा साँस बन मैं
बुझा प्यास बन मैं
निशा की हँसी में
मिला हास बन मैं!

गगन रन्ध्र में मौन का शब्द भर कर
धरा प्यार की रागिनी गा रही है!
प्रिये प्राण में चाँदनी छा रही है!

३१

चला जा रहा हूँ !

न इस राह का आदि मैं जानता हूँ
न इस राह का अन्त मैं मानता हूँ
दिशा पंथ की एक पहिचानता हूँ
नहीं जानता छल रहा पंथ को मैं
स्वयं पंथ से या छला जा रहा हूँ।
चला जा रहा हूँ !

नहीं है मुझे ध्यान जीवन-मरण का
नहीं ज्ञान है तप्त कण और तन का
मुझे एक ही ज्ञान है बस, जलन का
नहीं ज्ञात मरु जल रहा आज मुझसे
स्वयं या कि मरु में जला जा रहा हूँ !
चला जा रहा हूँ !

नहीं ज्ञात तट पर कि मँझधार हूँ मैं
निराधार हूँ या कि साकार हूँ मैं
यही लग रहा बस, निराकार हूँ मैं
न मालूम, है ढल रहा शून्य मुझमें
स्वयं शून्य में या, ढला जा रहा हूँ !
चला जा रहा हूँ !

३२

बहाओ न यों !

न जाने मुझे प्राण क्या हो गया
मधुर स्वप्न बन आज मैं खो गया
लहर बीच बन कर लहर खो गया
अगर है भँवर से बचाना मुझे
प्रिये, धार में तो बहाओ न यों।

सघन घन बनी प्राण की बेबसी
नयन में व्यथा आज मेरी हँसी
तुम्हारी किरण पर कहाँ जा बसी
अगर इन्द्रधनु है बनाना मुझे
प्रिये रंग मेरा मिटाओ न यों !

न जाने किधर से इधर आ गया
तुम्हारा मधुर स्नेह मैं पा गया
मदिर गीत सा प्राण में छा गया
अगर दीप सा है जलाना मुझे
प्रिये अश्रु के घन उठाओ न यों
बहाओ न यों ।

३३

तुम्हारे प्यार के ये क्षण !

मधुर जिनसे बना बन्धन
जलन भी बन गई चन्दन
बिना माँगे शरण पाकर
मरण भी बन गया जीवन

अमर वरदान बन आये
तुम्हारे प्यार के ये क्षण !

झलक जिनसे उठे सीकर
लहर लेकर उठा सागर
निशा में ज्योति की धारा
बहा कर हँस उठा अम्बर

मदिर मुस्कान बन छाये
तुम्हारे प्यार के ये क्षण !

अचल जिनसे बना चंचल
धरा का हिल उठा अंचल
गगन गूँजा, विजन गूँजा
बजे दो प्राण के पायल

किरण का गान बन आये
तुम्हारे प्यार के ये क्षण।

३४

तुम्हारी प्यास के ये घन !

रहा अब भीग जिनसे तन
रहा अब भीग जिनसे मन
जलन की भूमि पर जिनसे
बरस कर बह चला जीवन

हृदय नभ में रहे हैं छा
तुम्हारी प्यास के ये घन !

रहे भर बूँद में सागर
गगन में गीत के निर्झर
नये ही बन रहे क्षण क्षण
नयन में इन्द्रधनु के घर

सुधा भू पर रहे बरसा
तुम्हारी प्यास के ये घन !

उठे जी प्राण के मधुबन
भरे हर साँस में सावन
उठा हँस अश्रु में मेरी–
धरा का दुख भरा आँगन

उठे जब अश्रु में मुसका
तुम्हारे प्यास के ये घन !

३५

प्रिय प्राण में समा जा !

यों जी न मैं सकूँगा
मर भी न मैं सकूँगा
रह दूर इस तरह कुछ
कर भी न मैं सकूँगा

हर मौन में समा जा !
हर मान में समा जा !
प्रिय प्राण में समा जा !

यह सिन्धु क्या तरूँ मैं
पथ पार क्या करूँ मैं
रह दूर प्राण, कैसे
आगे चरण धरूँ

हर मीड़ में समा जा !
हर तान में समा जा !
प्रिय प्राण में समा जा !

प्रति रोम में रमे तू
उर - व्योम में रमे तू
आलोक बन नयन के
तन - तोम में रमे तू

हर साँस में समा जा !
हर गान में समा जा !
प्रिय प्राण में समा जा !

३६

तुमने मुझे जिलाया !

जब प्राण जल रहे थे
मधु गान जल रहे थे
ले प्यास सिन्धु तट पर
अरमान जल रहे थे

तब रूप की सुधा से
तुमने मुझे जिलाया !

थी मिल रही निशानी
मरु की बनी कहानी
दृग सिन्धु में बचा था
दो बूँद भी न पानी

तब प्यार की लहर ले
तुमने मुझे जिलाया !

जब चल पड़ा विवश बन
अपने विनाश - पथ पर
नभ से चला बिखरने
बन भूख प्यास का स्वर

तब बाँध कर नयन में
तुमने मुझे जिलाया !

३७

शिथिल होंगे न ये बन्धन !

तुम्हें मन में पुकारूँगा
तुम्हें बन में पुकारूँगा
गगन का मान बन कर मैं
तुम्हें घन में पुकारूँगा

नयन से फूल जो झरते
बना देंगे मधुर जीवन !
शिथिल होंगे न ये बन्धन !

लहर में घर बना लूँगा
व्यथा को वर बना लूँगा
विषम तम को तुम्हारे
हास का निर्झर बना लूँगा

गये जो बीत मधु के क्षण
बना देंगे मधुर जीवन !
शिथिल होंगे न ये बन्धन !

तुम्हारी याद का दृग-जल
बनेगा प्राण का सम्बल
प्रलय भी पार कर लूँगा
तुम्हारे ज्योति-पथ पर चल

रहे जो टूट ये सपने
बना देंगे मधुर जीवन !
शिथिल होंगे न ये बन्धन !

३८

प्यार के दो फूल हम हैं!

हम मलय के वृन्त पर मधु-
मास के वन में पले हैं,
साधना की होड़ में स्वर
की सुरभि बन उड़ चले हैं,

जीत के दो फूल हैं प्रिय,
हार के दो फूल हम हैं!

ओस के दो कण किरण के
पंथ पर आ मिल गये हैं,
दो दिशाओं से गगन की
डाल पर आ खिल गये हैं,

हास के दो, नयन की जल-
धार के दो फूल हम हैं!

कूल पर थे, था तभी मझ-
धार ने हमको पुकारा,
आ गये मझधार में तो
याद आता है किनारा,

कूल के दो फूल हैं, मझ-
धार के दो फूल हम हैं!

बह रहे स्वप्न लहरों
में स्वयं को ही मिटाते,
प्राण - बन्धन में बँधे भी
दूर होते, पास आते,

तृप्ति के दो, प्यास—
पारावार के दो फूल हम हैं!
प्यार के दो फूल हम हैं!

३६

जा रहा मैं

आ गया था भूल कर ओ निर्झरी, तेरे किनारे,
दो दिनों को ही सही, थे मिट गये दुख दर्द सारे,

आज फिर बीते दिनों के
गीत गाता जा रहा मैं!

कह रहा कोई कि रुककर सत्य यह सपना बना लो,
इस विजन की रागिनी को ओ पथिक, अपना बना लो,

किन्तु अपने भाग्य पर
आँसू बहाता जा रहा मैं!

जानता हूँ, हैं अकेले ही न जलते प्राण मेरे,
भर रहे आँखें किसी की ये विदा के गान मेरे,

किन्तु मन की बात
मन से ही छिपाता जा रहा मैं!

बह पड़े हैं प्राण मेरे काल की चंचल लहर पर,
कौन जाने सुधि मुझे फिर खींच लाये इस डगर पर,

प्राण रोते जा रहे पर
मुस्कराता जा रहा मैं!

जा रहा मैं

४०

आज स्वर के दीप का लघु दान मेरे देवता लो !

मैं तिमिर-बन्दी विजन में
चाहता आना शरण में,
आरती के दीप अपने
भेजता तुम तक गगन में,

बन्धनों में मुक्ति के ये गान मेरे देवता लो !

बह रहे ये ज्योति के स्वर
शून्य में तम की लहर पर,
जल रहे ये साध के वर
प्यास का अभिशाप लेकर,

तिमिर-सर में ज्योति के जलयान मेरे देवता लो !

आँधियों में ये पले हैं
चिर प्रतीक्षा के छले हैं,
युग युगों से ये प्रणय के
साधना पथ पर जले हैं,

साँस से इनका करो निर्वाण, मेरे देवता लो !
आज स्वर के दीप का लघु दान मेरे देवता लो !

कविता-क्रम

	प्रथम पंक्ति		पृष्ठ
१	समय की शिला पर मधुर चित्र कितने	...	१
२	उर के खुले के खुले ही रहे द्वार	...	३
३	मुक्ति-कारा की अचल प्राचीर	....	५
४	मेरी अमिट भूख मेरी अमर प्यास	...	७
५	जिस पर मुसकाती रूप-किरण	....	९
६	मुझे ज़िन्दगी का सहारा न मिलता	...	११
७	भार हलका हो न पाता	....	१३
८	मेरे मन ओ एकाकी मन	...	१५
९	पुकारा मैंने कितनी बार	...	१७
१०	युगों से दीप प्राणों का	...	१९
११	बरस लो प्राण-घन मेरे	...	२१
१२	सपने भी मुझको भूल गये	...	२३
१३	बीतेगा क्या यों ही जीवन	...	२५
१४	मेरे पंख ये झर जायँ	...	२७
१५	तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या, तुम्हारा क्या	...	२९
१६	पागल मन मत मनुहार करो	...	३१
१७	नहीं कोई, नहीं कोई	...	३३
१८	प्राण, तुम दूर भी	...	३५
१९	किसी के रूप के बादल	...	३७
२०	किसी की आँख के सपने	...	३९

२१	मैं तुम्हारी छाँह में चलता रहा तुमने न जाना	४१
२२	मेरी सुधि क्या आई न कभी ...	४३
२३	मैं देख रहा तुमको रानी ...	४५
२४	आ सकोगी ...	४७
२५	पाषाण मत बनो तुम ...	४९
२६	पागल न यों बनाओ ...	५१
२७	किसने मुझे पुकारा ...	५३
२८	आ गईं तुम प्राण ...	५५
२९	कहाँ आ गया मैं ...	५७
३०	प्रिये प्राण में चाँदनी छा रही है ...	५९
३१	चला जा रहा हूँ ...	६१
३२	बहाओ न यों ...	६२
३३	तुम्हारे प्यार के ये क्षण ...	६३
३४	तुम्हारी प्यास के ये घन ...	६५
३५	प्रिय, प्राण में समा जा ...	६७
३६	तुमने मुझे जिलाया ...	६९
३७	शिथिल होंगे न ये बन्धन ...	७१
३८	प्यार के दो फूल हम हैं ...	७३
३९	जा रहा मैं ...	७५
४०	आज स्वर के दीप का लघु दान मेरे देवता लो	७६